युग - संदर्भ

जगदीश उज्ज्वल

कल्पना प्रकाशन
कृष्ण कुंज बीकानेर

ये कविताएं

मेरे कवि ने युग संदर्भों को विभिन्न स्थितियों में भोगा है। मुझे जीवन के विभिन्न मोड़ों पर जिन अनुभवों से गुजरना पड़ा है, स्वाभाविक ही उनकी अभिव्यक्ति भी होती रही है और एक युग की साहित्यिक यात्रा का परिणाम ही है मेरी ये प्रस्तुत कविताएं।

इनके बारे में मेरी दृष्टि का विस्तार यहां देकर पाठकों और इन कविताओं के बीच एक सेतु का निर्माण मैं आवश्यक नहीं समझता—ये स्वयं ही सेतु का कार्य करेंगी और तभी मैं अपने कवि की सार्थकता स्वीकार करूंगा।

मैं काव्य का सौन्दर्य उसकी सम्प्रेषणीयता तथा—व्यष्टि में समष्टि का आभास होना ही मानता हूं। मैंने जिस परिवेश में जीकर इन कविताओं की रचना की है—वह परिवेश मेरा अपना है, और मैं समाज, राष्ट्र और विश्व से किन्हीं अर्थों में परस्पर ही जुड़ा हूं अतः वह परिवेश आपका भी है। इसलिए मेरे विशिष्ट अनुभवों में यदि आपको सामान्य के दर्शन हुए तो मेरा यह प्रयास सफलता की ओर उन्मुख समझूंगा।

कविताओं का मूल्यांकन तो पाठक ही करता है। आपकी समालोचनीय दृष्टि की मुझे सदैव प्रतीक्षा रहेगी एवं सुझावों का स्वागत !

इस संकलन के प्रकाशन का श्रेय श्री कृष्ण जन सेवी को है। रचनाओं के चयन, क्रम व अन्य अमूल्य सुझावों के लिए श्रद्धेय बंधुवर भवानीशंकर व्यास 'विनोद' एवं प्रकाश परिमल का केवल आभार प्रकट कर उनके सहयोग का मूल्य कम नहीं करना चाहता—उनका सहयोग तो सह-योग ही रहेगा।

जनवरी
२६-१-७१

जगदीश उज्ज्वल

सम्पर्क—
१८, पोकर क्वार्टर
जेल वेल, बीकानेर

द्वारा—
वासुदेव पचलंगिया
पो आ. मलसीसर
जिला:—झुंझनूं (राज०)

ये कविताएं

मेरे कवि ने युग-संदर्भों को विभिन्न स्थितियों में भोगा है। मुझे जीवन के विभिन्न मोड़ों पर जिन अनुभवों से गुजरना पड़ा है, अनायास ही उनकी अभिव्यक्ति भी होती रही है और एक युग की साहित्यिक यात्रा का प्रतिफल ही है-मेरी ये बचपन कविताएं।

इनके बारे में मेरी दृष्टि का विस्तार यहां देकर आपके और इन कविताओं के बीच एक सेतु का निर्माण मैं आवश्यक नहीं समझता—ये स्वयं ही सेतु का कार्य करेंगी और तभी मैं अपने कवि की सार्थकता स्वीकार करूंगा।

मैं काव्य का सौंदर्य उसकी सम्प्रेषणीयता तथा—व्यष्टि में समष्टि का आभास होना ही मानता हूं। मैंने जिस परिवेश में जीकर इन कविताओं की रचना की है—वह परिवेश मेरा अपना है, और मैं समाज, राष्ट्र और विश्व से किन्हीं अर्थों में अवश्य ही जुड़ा हूं अतः वह परिवेश आपका भी है। इसलिए मेरे विशिष्ट अनुभवों में यदि आपको सामान्य के दर्शन हुए तो मेरा यह प्रयास सफलता की ओर उन्मुख समझूंगा।

कविताओं का मूल्यांकन तो पाठक ही करता है। आपकी समालोचकीय दृष्टि की मुझे सदैव प्रतीक्षा रहेगी एवं सुझावों का स्वागत!

इस संकलन के प्रकाशन का श्रेय श्री कृष्ण जन सेवी को है। रचनाओं के चयन, क्रम व अन्य अमूल्य सुझावों के लिए श्रद्धेय बंधुवर भवानीशंकर व्यास 'विनोद' एवं प्रकाश परिमल का केवल आभार प्रकट कर उनके सहयोग का मूल्य कम नहीं करना चाहता—उनका सहयोग तो सह-योग ही रहेगा।

जनवरी
२६-१-७१

जगदीश उज्ज्वल

सम्पर्क—
१८, पोकर क्वार्टर
जेल वेल, बीकानेर

द्वारा—
वासुदेव पचलंगिया
पो. आ. मलसीसर
जिला:—झुंझनूं (राज०)

अनुक्रम

ये कविताएं

मेरे कवि ने युग-संदर्भों को विभिन्न स्थितियों मे भोगा है। जीवन के विभिन्न मोड़ों पर जिन अनुभवों से गुजरना पड़ा है, अनायास उनकी अभिव्यक्ति भी होती रही है और एक युग की साहित्यिक यात्रा प्रतिफल ही है-मेरी ये बचपन कविताएँ।

इनके बारे में मेरी दृष्टि का विस्तार यहां देकर आपके और इन कविताओं के बीच एक सेतु का निर्माण मैं आवश्यक नहीं समझता—ये स्वयं ही सेतु का कार्य करेंगी और तभी मैं अपने कवि की सार्थकता स्वीकार करूंगा।

मैं काव्य का सौंदर्य उसकी सम्प्रेषणीयता तथा–व्यष्टि में समष्टि का आभास होना ही मानता हूं। मैंने जिस परिवेश मे जीकर इन कविताओ की रचना की है—वह परिवेश मेरा अपना है, और मैं समाज, राष्ट्र और विश्व से किन्हीं अर्थों मे अवश्य ही जुड़ा हूं अतः वह परिवेश आपका भी है। इसलिए मेरे विशिष्ट अनुभवों में यदि आपको सामान्य के दर्शन हुए तो मेरा यह प्रयास सफलता की ओर उन्मुख समझूंगा।

कविताओं का मूल्यांकन तो पाठक ही करता है। आपकी समालोचकीय दृष्टि की मुझे सदैव प्रतीक्षा रहेगी एव सुझावों का स्वागत !

इस सकलन के प्रकाशन का श्रेय श्री कृष्ण जन सेवी को है। रचनाओ के चयन, क्रम व अन्य अमूल्य सुझावो के लिए श्रद्धेय बधुवर भवानीशंकर व्यास 'विनोद' एवं प्रकाश परिमल का केवल आभार प्रकट कर उनके सहयोग का मूल्य कम नही करना चाहता—उनका सहयोग तो सह-योग ही रहेगा।

जनवरी
२६-१-७१

जगदीश उज्ज्वल

सम्पर्क—
१८, पोकर क्वार्टर
ल बेम, बीकानेर

द्वारा—
वासुदेव पचसंगया
पो॰ आ॰ मनगीतर
जिला:—झुंझनू (राज॰)

अनुक्रम

ये कविताएं

मेरे कवि ने युग-संदर्भों को विभिन्न स्थितियों में भोगा है। मुझे जीवन के विभिन्न मोड़ों पर जिन अनुभवों से गुजरना पड़ा है, अनायास ही उनकी अभिव्यक्ति भी होती रही है और एक युग की साहित्यिक यात्रा का प्रतिफल ही है-मेरी ये बचपन कविताएँ।

इनके बारे में मेरी दृष्टि का विस्तार यहाँ देकर आपके और इन कविताओं के बीच एक सेतु का निर्माण मैं आवश्यक नहीं समझता—ये स्वय ही सेतु का कार्य करेंगी और तभी मैं अपने कवि की सार्थकता स्वीकार करूंगा।

मैं काव्य का सौंदर्य उसकी सम्प्रेषणीयता तथा—व्यष्टि में समष्टि का आभास होना ही मानता हूं। मैंने जिस परिवेश में जीकर इन कविताओं की रचना की है—वह परिवेश मेरा अपना है, और मैं समाज, राष्ट्र और विश्व से किन्हीं अर्थों में अवश्य ही जुड़ा हूं अतः वह परिवेश आपका भी है। इसलिए मेरे विशिष्ट अनुभवों में यदि आपको सामान्य के दर्शन हुए तो मेरा यह प्रयास सफलता की ओर उन्मुख समझूंगा।

कविताओं का मूल्यांकन तो पाठक ही करता है। आपकी समालोचकीय दृष्टि की मुझे सदैव प्रतीक्षा रहेगी एवं सुझावों का स्वागत!

इस सकलन के प्रकाशन का श्रेय श्री कृष्ण जन सेवी को है। रचनाओं के चयन, क्रम व अन्य अमूल्य सुझावों के लिए श्रद्धेय बघुवर भवानीशंकर व्यास 'विनोद' एवं प्रकाश परिमल का केवल आभार प्रकट कर उनके सहयोग का मूल्य कम नहीं करना चाहता—उनका सहयोग तो सह-योग ही रहेगा।

जनवरी
२६-१-७१

जगदीश उज्ज्वल

सम्पर्क—
१८, पोकर क्वार्टर
जेल वेल, बीकानेर

द्वारा—
वासुदेव पचलंगया
पो. श्रा. मनसीसर
जिला:—झूंझनूं (राज०)

ये कविताएं

मेरे कवि ने युग-संदर्भों को विभिन्न स्थितियों मे भोगा है। मुझे जीवन के विभिन्न मोडों पर जिन अनुभवों से गुजरना पड़ा है, अनायास ही उनकी अभिव्यक्ति भी होती रही है और एक युग की साहित्यिक यात्रा का प्रतिफल ही है-मेरी ये पचपन कविताएँ।

इनके बारे मे मेरी दृष्टि का विस्तार यहां देकर आपके और इन कविताओ के बीच एक सेतु का निर्माण मैं आवश्यक नही समझता—ये स्वय ही सेतु का कार्य करेंगी और तभी मैं अपने कवि की सार्थकता स्वीकार करूंगा।

मैं काव्य का सौंदर्य उसकी सम्प्रेषणीयता तथा—व्यष्टि मे समष्टि का आभास होना ही मानता हूं। मैंने जिस परिवेश में जीकर इन कविताओं की रचना की है—वह परिवेश मेरा अपना है, और मैं समाज, राष्ट्र और विश्व से किन्हीं अर्थों में अवश्य ही जुड़ा हूं अतः वह परिवेश आपका भी है। इसलिए मेरे विशिष्ट अनुभवों में यदि आपको सामान्य के दर्शन हुए तो मेरा यह प्रयास सफलता की ओर उन्मुख समझूंगा।

कविताओं का मूल्यांकन तो पाठक ही करता है। आपकी समालोचकीय दृष्टि की मुझे सदैव प्रतीक्षा रहेगी एव सुझावों का स्वागत !

इस सकलन के प्रकाशन का श्रेय श्री कृष्ण जन सेवी को है। रचनाओं के चयन, क्रम व अन्य अमूल्य सुझावों के लिए श्रद्धेय अग्रज भवानीशंकर व्यास 'विनोद' एव प्रकाश परिमल का केवल आभार प्रकट कर उनके सहयोग का मूल्य कम नहीं करना चाहता—उनका सहयोग तो सह-योग ही रहेगा।

जनवरी
२६-१-७१

जगदीश उज्ज्वल

सम्पर्क—
१८, नोखर क्वार्टर
रेल वे, बीकानेर

द्वारा
वासुदेव

समर्पण:—

इस सृष्टि में
जन्म के बाद
मेरी जीवन यात्रा
प्रारम्भ भी नहीं हुई थी

मेरे पांव
इस धरती पर
गड़े भी न थे
मेरा बोध जागा भी न था
कि उनका साया उठ गया
जिनकी छाया तक भी
मैं देख नहीं पाया—
इस जन्म में—

पिता स्वर्गीय श्री मूलचंद शर्मा (पचलगिया) की स्वर्गीय आत्मा के समक्ष नत मस्तक हूं—इस संकलन को थामे—

—जगदीश उज्ज्वल

——

समर्पणः—

इस सृष्टि में
जन्म के बाद
मेरी जीवन यात्रा
प्रारम्भ भी नहीं हुई थी

मेरे पांव
इस धरती पर
सधे भी न थे
मेरा बोध जागा भी न था
कि उनका साया उठ गया
जिनकी छाया तक भी
मैं देख नहीं पाया—
इस जन्म में—

पिता स्वर्गीय श्री मूलचद शर्मा (पचलगिया) की स्व
कि समक्ष नत मस्तक हूं—इस सकलन को थामे—

—जगदी

हमारी बेबसी पर

•

समाज में उग रहे हैं
मात्र वचना के पेड़ अनगिनत
किन्तु
नामधारी आदर्श कृषक
लगा रहे हैं पौध
सुनहरे भविष्य की

सायास
कर रहे हैं भूमि को उर्वरा
और
कल्पना में पका रहे हैं
सोने सी फसल

यातनाएं सहकर
करते हैं तथाकथित कल्याण
समाज का

श्रम हाथों से नहीं
बातों से करते हैं
पसीने की बूंद
धरती पर नहीं

अखबारों पर गिरती है
और
भाषण के अन्त में छपता है
हमारे निजि सवाददाता द्वारा

उपलब्धि

•

पनप रही है
अपाहिज संस्कारों की
अवैध संतान —सृष्टि का श्रेष्ठतम उत्पादन

प्रजातन्त्र का दम्भ
अविकसित व्यक्तित्व की
सार्वजनिक विज्ञप्ति

नैतिक और बौद्धिक आचरणों की
सामूहिक साझेदारी—विवेक से ईर्ष्या

जमाने का आत्मसंयम
दर्दों का बलात्कार

क्या अब भी अपूर्ण है
नयी सभ्यता की वांछित उपलब्धि

हम पैरों के बद

•

हम
पैरों के बदले

हाथों से चलते हैं
जिनके हैं जितने ही लम्बे हाथ
उनकी पहुँच भी
उतनी ही विस्तृत

अहम् बेचकर
हम खरीदते हैं लम्बे लम्बे हाथ
तभी चल पाते हैं
इस युग में
समय के साथ

हम पैरों के

जमाने का दर्द

•

जमाने का दर्द
युग का आक्रोश
समय की नव वधु
घूंट घूंट कर
पीती है ।

नीले अधर
नीलपायी कण्ठ
कुछ भी चिन्ता नही
यह आत्म हत्या नही
(त्याग है)

किन्तु
वियटनाम की बारूदी हवा
गर्भ फटने का अहसास
पैरो तले फफोले
कई शताब्दियो तक
ठहर जायेगी सभ्यता
और
मनु की खोज मे
सिर धुनेगी

◆

नई सभ्यता: गन्धभ्रम

•

एक जवान गंध
स्पर्श करती है

एक घुटे मन की तपन
गमले में सजे
कैक्टस की खिलखिलाहट में
पिघलती है

हां ! अभी मैं जागूंगा
देखूं
यह गन्ध कैक्टस की है
या
यह गन्ध का कैक्टस है

हड्डियां रबर तो नहीं

•

चीख !
चीख !! चीख !!!
बांस पर लटका—
अभिलाषाओं का जाल
............भविष्य
उछलने की शक्ति खो बैठा है

हाथों से पसीना नहीं
खून बहता रहे
ओंठ गीले करना धर्म विरुद्ध

पैरों तले की जमीन
धसती रहे
हड्डियां रबर तो नहीं

कुंठाओं के खोल उतार फेंके
फिर बहादुरी क्या
आस्थाहीन चिनगारी हृदय में
सुलगती है
पलती है सभ्यता—परम्पराओं के घेरे में
आज भी मनु की सन्तान

खून को पसीना समझ
भोग रही है
युग के सन्दर्भ

◆

जिन्दगी :

•

उचटी शाम
गर्म ग्राहो का खिलता कमल

बुझे चेहरो के गुलाब की महक
दृष्टियो का आलिंगन
निगाहो का गुनाह

रग बिरगी सडक पर गुजरती कार
उसकी चमक मे
अपना प्रतिबिम्ब देखता
एक अधनगा बच्चा

मेरी सास की गति
खिड़कियों से उठती कहकहों की गध

स्वरो के पीछे—दौड़ती दुकाने

एक ओर
फुटपाथ पर खड़ा
एक पत्रिका के मुखपृष्ठ के चित्र मे
खोया मै
क्या सच ही यह जिन्दगी नही ?

शाम : एक चित्र

•

तारकोल की स्याह
सड़क पर—
पिघलती है
फुटपाथ की खामोशी
उससे चिपकी हुई
उभरती हैं—स्याह आकृतियां

आकृतियां
जो दूर तक चली गई हैं
सिर झुकाये
निर्दोष चेहरों का बोझ लादे
छोड़कर सब अन्यथा विचार
और
नापाक इरादे

लगता है जैसे
लौटरही हों चिटियों की लम्बी कतार
मरे मुर्दे गाड़कर
अथवा अपनी ही जाति की
कमजोर चिटियों को पचाकर
और शपथ लेकर
आज फिर—सह अस्तित्व की

आस्था का जन्म

•

दीवारों को ढहते-ढहते
अब हम
क्षणों को जीने का
उल्लास लिए —

एक दूसरे के चेहरों पर
छाई दहशत को
चौराहों पर उगा देते हैं

धमनियां हमारी
वज्र बन सकती है
फिर रक्त और मांस
अविरल बहता मांस
युग विष पचाने की पूरी-पूरी आस

क्यों नहीं
अनास्था की चाल रोक दें
कुंठाओं की ढाल—छोड़ दें
घुटन का कवच—तोड़ दें

पगडण्डी पर उगी घास
बाधाओं का
अब
जो

जिन्दगी की अनिवार्यता

•

जिन्दगी भर
जिया
परतें उखाड़ उखाड़ कर
सिया
वह दर्द तुम्हारा था
या
मेरा
जिसे दोनों ने
विवश
पिया !

◆

नई सभ्यता : अवरोध

•

कैक्टस के भी
फूल लगेंगे
काटों की आयु
गमले से बडी नही

अपना पत्थर सा हृदय
कितना ही
टूक टूक करो

अपने आप फैशन के गीले पन से
नई पीडी की सतह पर
कैक्टस फूलेंगे ही

जिन्दगी एक चित्र

•

प्यार की कूंची से
खिंच जाते हैं
रंग भरे
सुख के दिन
और
रंगीन
छिटके से
बन जाते हैं
दुर्दिन
जिन्दगी के
गमगीन हाथों से

◆
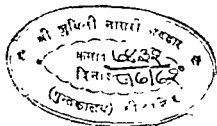
दिन के अन्धेरे में

•

मानवता की अकाल मौत
आह कितना बुरा हुआ

हमारे न्याय का विहग भी
पंख फैलाकर उड़ गया

क्या इस सूने में
कभी 'गुटरगू' सुनेगी
दो पक्षियों की—एक ही डाल पर
या
ची ···चो····ही सुनते रहेंगे
आक्रोश के चमगादड़ों की—
कुंठा के घेरे में

क्या अब
केवल स्वार्थों के उल्लू ही बोलेंगे
दिन के अन्धेरे में

मौत का भय

•

आदमी
एक ही दिन में
कई कई बार मरता है

अपने को बचाने के लिए
अस्तित्व बचाने के लिए
उसकी लाश

दौड़ती है
सड़कों पर
सड़ती है
होटलों में
सजाई जाती है
दुकानों में

बंद कर दी जाती है
आफिस में

•

उस पर लदा है
मन सोला बोझ
दायित्व का

लाश !
फिर भी लालसा है
स्थायीत्व की
मुर्दे को मौत का भय

पग फूंक फूंक कर रखता है
आदमी
एक ही दिन में—
कई कई बार मरता है—मरने को बचाने के लिए

होने को सभी कुछ होता है

•

सूरज उगते है
टूटते नभ
कुछ भी करने को
होता है स्पष्ट बहुत
प्रकाश
दृष्टियां
निगाहे

हाथ और पैर भी
होने को सभी होते हैं

हम उनसे कितना प्रतिदान
भी पाते हैं
....
केवल जीने की कल्पना
घुटने का अहसास
और
प्राप्त करने की यत्रणा
भी पाते है

इच्छाए
भावनाएं
घास की तरह उगती है
यदि कांटो की परवाह नहीं
होते है—पथ बहुत
मंजिलें सभी
क्षितिज के घेर मे ही
यही कही होती है

घरों में गाते हैं

रोने को सभी कुछ रोता
पीने को हम सभी पीते हैं

फिर भी जिन्दगी भर
कड़ुवाहट में डूबकर
अपनों को अंजुरी भर भ
पीते हैं

उपवास अहिंसा का अंग
हमारी अहिंसकता का परिणाम है

[illegible] है मुझे
मानता हूं।

युगों से जमती परतें
गर्द की अंधेरे कोनों में—
हमने कोने साफ करने चाहे हैं
तभी तो परतें उभर रही हैं
और धुन्ध में
सर्वत्र धूल कणों ने
क्षितिज को धुंधला कर दिया है
इसलिये कुछ भी नया नहीं
दोस्त
हमारी दृष्टियां बदली हैं।

जिन उगलते सर्पों के
दंश सहने को
मजबूर हैं—हमारे कर्म
हमारे धर्म
और
लापता गुजरती है
जिन्दगी
जिसमें से रिस रहा है
नाग-संक्रमण काल का
और
धुंधला गये हैं क्षितिज
आदमी की मौत पर
(तथाकथित मुक्ति बोध पर)

प्रजातन्त्र

•

प्रजातन्त्र का अर्थ
यही तो है

प्रजा के प्रतिनिधि
कुर्सियों पर बैठकर
करें शक्ति परीक्षण

उसके परिणाम
जन जन तक पहुंचा दें
और
शक्ति परीक्षण में आई
चोट को
सार्वजनिक घोषित कर
दल बदल लें
(क्योंकि झगड़े से दीवार भली)

अन्यथा हम
लौटकर पहुँचना चाहते हैं
उसी बर्बर युग में
जहाँ केवल भूख हो
और कच्चा मांस

तीन कदम

•

एक कदम
राह के पत्थर से ठोकर खा
पीछे हट जाता है

एक कदम
राह के पत्थर को ठोकर मारकर
आगे बढ़ जाता है

एक कदम
राह के पत्थर को एक ओर करके
पीछे आने वालों के लिए
मार्ग प्रशस्त कर देता है।

सिकुड़ती मेज और धंसती कुर्सी

•

अब मैं
तरल भावनाओ की ठोस मेज
और
कड़वे आक्रोश की गद्देदार—
कुर्सी पर बैठा
गले मे अटके—
कुछ नुकीले शब्द निकालने का यत्न करता हूं

तो लगता है
क्षण प्रतिक्षण मेज सिकुड़ रही है
कुर्सी धसती जा रही है
और मेरी—कुंठा की जमीन का फर्श
तेजी से ऊंचा उठ रहा है
जो कुछ ही देर मे निगल लेगा

मेज कुर्सी सहित मुझे
मैं गले मे अटके शब्दो को
खून की घूंट के साथ
निगलकर
भाग खड़ा होता हूं

चांदनी और कोढ

•

धीरे धीरे बढते अ धकार मे
लौटते – मजदूर
थके बाबुओ के चेहरे
और फुटपाथ की तपन देखकर

मैं सिहर जाता हूं
लगता है
बढते अधकार मे
अभावो के लिजलिजे कुलबुलाते
कीडो के स्पर्श से
ये सब बुरी तरह डर गये हैं

फिर भी
इनके हाथ उन कीडो को
उतार फैंकने में असमर्थन हैं

और जब चाद उग आता है
उसकी चादनी मे उनके चेहरो पर
उभरते भावो को देखकर
मुझे लगता है

अवश्य ही चादनी में घुला

कोढ बरस रहा है
तभी लगता है—

उन सबके घावो से उठती दुर्गन्ध
मेरे पीछे पीछे चल रही है
—हां मुझे तभी विश्वास होता है
चादनी मे घुला कोढ बरस रहा है

अरमानों की सुबह

•

तुम्हारे अधरों की पपड़ियो पर
घू भाई
रक्त की लकीर

तुम्हारी आंखो की गहराइयाँ
माथे की उभरती नसें
तुम्हारे कदमो की चाल
क्या सच ही तुम्हारे अरमानों की
सुबह घुट गई—

हम जो लिखते हैं

•

हम जो लिखते हैं
न जाने किस आतंक से
किस अनुभूति से लिखते हैं
कि सब में से केवल
कुछ प्रतिशत ही रह पाते हैं

और
शेष प्रतिशत
हर बार
एक खोखली हंसी के साथ
एक भयानक चीख में
हमें कोसता रह जाता है
और
हमारी लेखनी
कितनी ही बार पुनर्जन्म ले चुकी है

◆

हम जो कहते हैं

•

हम जो कहते हैं
वह अन्तर की बात नही
केवल वही कहते हैं
जो
पक कर
सड़ कर
बरबस बाहर बह आती है
चेहरे पर पुत जाती है

और ये सभी बातें
अनकही ही रह जाती हैं
जो भीतर है
ताजा है
तीखी है
चुभती है कांटे सी

◆

जीवन : एक बुझती लालटेन

जीवन :
गन्दी गली के उस नुक्कड़ पर
अन्धकार में
मद मंद जलती
नगर पालिका की एक धूल भरी
लालटेन है
जिसका शीशा हो गया काला
धुएं से
जो अपने में ही घुट रही है
और बीत रहा है तेल
आधी रात ही

जीवन : एक दृष्टि

●

बूढी आखों मे
कई दिन की निराशा के पीछे चमकती
आशा की एक क्षीण किरण

टूटी सी नाव की जर्जर पतावर थामे
उभरी नसो वाला
कमजोर हाथ

जान की बाजी लगाकर
मिली आखिर एक मछली—

जिसके सहारे कट सके जिदगी
किन्तु
किनारे तक आते आते
उसको खा गये—मगरमच्छ: घडियाल
शेष रहा—केवल गीली हड्डियों का
ढांचा
नाव किनारे लगी

बूढी आखो की क्षीण चमक
खो गई शून्य मे
जैसे
मैं, तुम, हम सब
किन्तु
वे नही

तुम्हारा निर्णय

•

आज अनजाने ही
तुम्हारे प्रति
अनगिन भाव जगे हैं
एक साथ बाहर आना चाहते हैं
किन्तु यह संभव नहीं
मैं यत्न करूंगा
कि एक एक बात
तुम्हें कहता रहूं क्रम से
संभव है सब बातें
कह नहीं सकूं जीवन भर
और
मुझे यह भी नहीं पता
कौन सी बात पहले कहने की है
अगर तुम्हें निर्णय सही ही करना है
तो अपना निर्णय स्थगित रखो
जब तक मैं पूरी बात न कह दूं

एक जीवन संगिनी

•

शाम को
थका होता हूं
खाली पेट
मन प्रसन्न

कदम बहुत तेजी से बढ़ते हैं
घर की ओर
क्योंकि रोज की तरह
आज भी करती होगी इन्तजार
सूनापन ओढ़े नवीन घुटन
कमरे में जाते ही मिलेगा
जिसका गाढ़ालिंगन
और
रात भर
गहरे आंचल का साया

आंख - मिचौनी

ल शाम
श्चिम से देखा
रुण क्षितिज पर स्थिर
डूबता सूरज
ाल !
कुछ धुंधला सा दिखाई दिया

जैसे
तुम्हारे माथ की बिंदी
गरद से भर गयी हो

इतने मे ही नही दिखाई दी
जब तुम्हारी बिंदी
तो देखा इधर उधर
प्राची से दिखा पूनम का चांद

चांद भी वैसा ही स्थिर
अरुण क्षितिज पर
जैसे तुम सामने से उठकर
तुरन्त पीछे छिप गई हो

यह पूनो की शाम थी
या
तुम्हारी आंख-मिचौनी

संतुलन

•

रात के सन्नाटे में
अचानक एक टूटते तारे को देख
मैं
कांप उठता हूं
जब प्रकृति का सम्बन्ध ही
संतुलन खोकर
टूट जाता है
तो मुझे आशंका है
कहीं हमारे आकर्षण की डोर भी
एक दिन
संतुलन खोकर टूट न जाय
और
मुझे मेरे सांस की गति से

छिछला प्यार

•

तुम्हारी शिकायत है—
हमारा प्यार अभी छिछला है
हम मिलकर भी मिल नहीं पाते हैं

मैंने
उस नदी में बाढ़ आते देखी है
जिसके किनारे स्वच्छ जल में पाँव डाले
हमारा हुआ था
प्रथम मिलन

बाढ़ के बाद
पानी हो गया गन्दा
और किनारों पर
दूर दूर तक उछल गया कीचड़
जब हम मिलते हैं
तो मैं सोचता हूँ
कहीं हमारे प्यार की स्वच्छ नदी में
बाढ़ आकर
हम पर कीचड़ न उछाल दे
चाहे तुम इसे
कुछ भी कह लो।

हम जो जीते हैं

•

हम
सिद्धान्तों के पेड़ पर
बया की तरह
उल्टे लटके हैं
क्यों कि पालना पूरा
सच्चाई का हमें मिला नहीं
जन्म से'
हम
प्रति दिन के व्यवहार के
की फ्रेम में
परम्परागत संस्कारों को
ममी सजाकर
प्रदर्शन करने के लिये
मजबूर हैं
हम
नन्हे बच्चे की तरह
चीखकर दौड़कर
पकड़ना चाहते हैं पल्ला
नई सभ्यता का,
हम
आविष्कारक और रक्षक हैं
नये युग के
करते हैं सुबह से शाम तक
अभिनय असफल सा
पाखण्ड और ढोंग सा
जीने का

एक परिचय

पूछो हो कौन हूं ?
कुछ भी नहीं केवल एक अकिंचन संदेश
एक अकिंचन पुकार
जो तुम्हें कहती बार बार पुकार
उठो, मत सोये रहो
मीठे मीठे सपनों में
मत खोजाओ और अब
भीने आंचल की भीनी गंधों में
मत घबराओ तनिक भी
झूठे भय से
पथ के कांटों से
मत बन्धे रहो
परिपाटी के जीर्ण बन्धन से
मत हताश हों मंजिल की गुरुता से
उठो मीठे सपनों का
भीने आंचल की भीनी गन्धो का
मोह छोड़
विघ्नों की, बन्धनों की
परवाह न कर
चल पड़ो दृढ़ पैरों से
मंजिल तैयार खड़ी है जयमाला हाथ लिये
अभिनन्दन स्वीकार करो।

जीवन के कैनवस पर

•

जीवन के कैनवस पर
मन की तूलिका चलती रही है
अब तक
सुबह और शाम

भावनाओं का रंग-बिरंगा रंग
बेहद चमकदार है
फिर भी कैनवस अभी कोरा है
उभरे नहीं है रंग
किन्तु अन्तर में कहीं कोई
शून्य भी है जहां जीवन के पहले
तूलिका के रंग धुल जाते है
और कैनवस पर—
चलती है रंग विहीन तूलिका
तभी तो कैनवस कोरा है
और शून्य मे उभरा है
धुंधला धुंधला सा चित्र
अच्छा खासा पिकासो शैली का।

बौना प्यार

•

जब कोई
टैरिलिन की बुसर्ट पहने
गुजर जाता है
सड़क पर,
गर्व से

खिले चेहरे से
केपसोल के जूतों की खटखट से
अपने अस्तित्व का
विज्ञापन सा करता
तो अनजाने ही मेरी दृष्टि
तुम्हारे बुझे चेहरे
घिसी हुई पोपलिन की कमीज पर
होती हुई
चरणों मे लिपट जाती है
और मुझे लगता है
हमारा बौना प्यार
एक ईंच और बढ़ गया है

एक प्रत्युत्तर

•

तुम्हारा पत्र मिला
तुमने लिखा
पत्र दिया था
मुझे न मिला
मुझे दुख है—शायद पता गलत हो गया हो

तुम्हारी—यह सफाई सही थी
जब तुम गये थे
कुछ ही देर बाद
तुम्हारी—याद आगई थी
क्या उस पर तुमने
यही पता लिखा था ।

एक दर्द भरा सपना

•

उषा का आगमन
संसार का शोर—मैं जाग उठता हूं
किन्तु लगता है
मेरे इर्द गिर्द अंधेरा है
मैं नींद की गोद में जाने लगता हू

दिन भर जितने काम करता हूं
देखता हूं
सुनता और सहता हूं
यह सब—
मुझे एक दर्द भरा सपना सा लगता है
जिसकी लम्बी कड़ियों में
आज और जुड़ जायेगी एक कड़ी
एक दिन—मेरे जीवन का अमूल्य क्षण

जब पीड़ा बहुत बढ जाती है
सपनों गोद से फेंक दिया जाता हूं
खुली आंखों आने वाला स्वप्न
टूट जाता है
और तभी
पश्चिम में सूरज डूब जाता है

प्यारा मृगछौना

•

आज मैंने
पहाड़ के पीछे से निकलते
पूनम के चांद को
देखा है

किनना गोरा गोरा
जितना पहाड़ मैला
वह उतना ही उजला

तो क्या सच ही
विरह के क्षणों का पहाड़
अपने पीछे
मिलन का इतना प्यारा

चांद रखता है
प्राण !
फिर तो मुझे
पहाड़ भी—प्यारा लगेगा
मृग छौना सा

स्वप्नों की गंध

•

स्वप्नों की गंध
ताजा है अभी
गजरों की महक
सूख नही गई
तपती दुपहरी मे-

कुंवारा भविष्य
निरन्तर स्वाद चखता है
खुली आखो से
देखता है क्षितिज के पार
सुनहरी भोर की किरण

सद् प्रयासों की चोटी पर
अभी ताजा है—स्वप्नों की मधुर गंध
अंधेरा भागा है
कुठांओं का
दोस्त
आंख मलते हुए उठो
स्वागत करना है
नई सुबह का

मौन प्रतीक्षा

•

हम
चौराहों पर सायास
नगे स्वप्न
मुट्ठियों मे भीचे
खडे हैं

—चमडी उतरने पर भी
मांस चू नहीं पडता
रक्त सूखी आंखों से देखते हैं
हड्डियों का स्पर्श
साफ महसूस करते हैं

हम प्रतीक्षा करते हैं
उस युग की
जिस पर उछाली गयी
बोटियां
वह सहर्ष निगलने को आतुर हो

हम चौराहो पर सायास
नगे स्वप्न
मुट्ठियों मे भीचे
खडे हैं

•

तपती दुपहरी

•

तपती दुपहरी
लगता है जैसे
दमाओं की तरह—चुभती ही रहेंगी
सूरज की किरणें अगर

आज भी
बूंद नहीं गिरी एक
स्वार्थों की तरह टकराते रहे बादल
बच्चे की भूख से व्याकुल माँ की तरह
प्यासी ही रही धरती—

आज भी
हाँ विषमता की तरह
निकलता रहता पसीना

आलस्य की तरह
जमकर बैठ गई हवा
और
घुटती ही रही जिन्दगी
और दिनों की तरह
आज भी
तपती रही दुपहरी

श्रम की अर्चना में

•

क्षणो के धागो से
समय का बुनकर
बुनता है भविष्य
एक राही दौड़ता है
क्षणों को छोड़
समय के पीछे
भविष्य कभी पकड़ नही पाता
एक राही क्षण-क्षण को
बाध लेता है
दोनो हाथों से
थाम लेता है
भविष्य अपने आप चला आता है
श्रम की अर्चना मे
इसलिए सफल वही है
जिसने क्षणो व्यर्थ
नही गवाया है
दोनो हाथो श्रम कमाया है

प्रश्न:—

•

जीवन लगता है
उस नदी सा
जिसके दो समानान्तर किनारे
कहीं भी मिल नही पाते हों
और मै इस पार से उस पार जाने को
बढ़ रहा हूं
बीच का अन्तर
एक एक दिन से पार कर रहा हूं

अब मझधार है शायद
क्योकि डूब रहा हूं
फिर सोचता हूं
यह छिछला सा जीवन
क्या यही मझधार है ?

नहीं यह मझधार हो नही सकता
यह तो वही किनारा है
जहा से बढना आरम्भ किया था
तो अब तक जितने भी डूबे हैं मझधार
क्या वे सभी इस निष्ठुर किनारे से ही
छले गये हैं
क्या उस पार का किनारा
अब तक सुना ही है !

हम सभ्य हैं

•

आज हम सभ्य हैं
घुटकर रहना नहीं चाहते
बंध घेरों मे
पालतु पशु की तरह
चहकना चाहते हैं
बहारों के संग-संग
जब बाहर हम निकलते हैं
घर की दीवारें हमारे पीछे दौड़ती है
आखिर कैसे जिया जाय
ओफ !
इतनी कड़वी घुंट अभावों की
कैसे पी जाये,
हमारे चारों ओर घेरा बनाकर
बंद घेरो की टूटी ईंटें
सडक पर चलती है
और हम चहक नही सकते
बहारों को देख नही सकते
अगर वास्तव मे हम छुटना चाहते हैं
इन घेरो से
तो फिर क्यों घर सजाते हैं
बहारो को लजाते हैं
क्या टूटी ईंटो को
सडक पर बिछा नही सकते ?

किन्तु
परदे के पीछे
अभिनय का आभास था
मैं स्टेज पर कह देने की ठानता हूं
दर्शकगणों को पहिचानता हूं
और परिणामों को जानता हूं
विवश
अपने को अभिनय की अनुकृति मानता हूं !